वहाबी मत का सत्य

लेखक : आयतुल्लाहिल उज़मा सय्यदुल उलमा मौलाना सै0 अली नक़ी नक़वी
सम्पादन : नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

क़िस्त : (8)

सुरए नूह में है कि "वह मुशरेकीन कहते हैं कि अपने ख़ुदाओं को कभी न छोड़ना, वोद को, सवाअ को, यग़ूस और यऊक़ व नसर को" यह सब उन मूर्तियों के नाम है जिन्हें वे साफ–साफ खुदा कह रहे हैं।

सुरः–ए–हूद में है कि "हम कभी भी इन खुदाओं को नहीं छोड़ेंगे।"

फिर है के "हम समझते हैं कि हमारे खुदाओं में से किसी ने तुम्हें कुछ हानि पहुँचा दी है।" और अल्लाह कहता है कि "नहीं लाभ पहुँचाया उनके खुदाओं ने जिन्हें वह अल्लाह को छोड़कर पुकारते थे कुछ भी।" और सुरः–ए–हजर में है कि "हमने आपको बचाया उन मज़ाक उड़ाने वालों से जो अल्लाह के अतिरिक्त दूसरा खुदा बनाते हैं।" और सुरः–ए–बनी इस्राईल में है कि "अगर उसके साथ और खुदा होते जैसा कि वह कहते हैं तो उस समय वह अर्ष के मालिक के मुक़ाबले में कोई सूरत (उपाय) निकाल लेते। "और सुरः–ए –मरियम में है कि "उन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर बहुत से खुदा बना लिए ताकि वह उनके लिए वर्चस्व दिलाने वाले हों, कदापि नहीं बहुत जल्दी उनकी उपासना से इनकार करेंगे और स्वंय उनके मुख़ालिफ़ (प्रतिपक्षी) होंगे।" और सुरः–ए–अंबिया में स्वंय उनकी ज़बानी है कि "क्या यही वो व्यक्ति है जो तुम्हारे खुदाओं की चर्चा किया करता है?"

फिर हैं जब जनाबे इब्राहीम ने मूर्तियों को तोड़ डाला "उन्होंने कहा कि किसने हमारे खुदाओं के साथ यह बर्ताव किया वह निश्चय अत्याचारियों में से हैं "उन्होंने (इब्राहीम[अ] से) कहा," क्या तुमने हमारे खुदाओं के साथ यह बरताव किया है ऐ इब्राहीम?" फिर कहा "उन्होंने कहा कि इन्हें आग में डाल दो और अपने खुदाओं की सहायता करो।"

और सुरः–ए–फ़ुरक़ान में है

"उन्होंने उसे छोड़ कर ऐसे खुदा बनाए हैं जो किसी वस्तु को बना (सिरजन) नहीं सकते और वह स्वंय बनाए गए हैं।" इन सबसे पता चलता है कि वह मुषरिक लोग अपने बुतों को बे झिझक 'इलाह' अर्थात् भगवान, खुदा कहते थे इसके विपरीत किसी मुसलमान से जो हज़रत[स] या औलिया व पहुँचे हुए अल्लाह वालों में से किसी का आदर सत्कार करता है पूछा जाए कि तुम इन्हें खुदा समझते और उनकी उपासना, मुक्ति करते हो? तो वह कदापि नहीं मानेगा बल्कि कठोरता से इसका खण्डन करेगा। इसी से उन मुषरिकों और मुसलमानों में अन्तर पता चलता है।

मुसलमानों के लिए यह कहना कि "उनका रोज़ा नमाज़ आदि सब जनता को धोखा देने के लिए है और अपने षिर्क को इस्लाम के दामन में छुपाना है।" इसके जवाब में कोई व्यक्ति उतने ही ऊँचे सुर के साथ यह कह सकता है कि नज्दी वहाबियों का नमाज़ रोज़ा और हज आदि सब दिखावा है और इसका सच्चाई से कुछ लेना देना नहीं क्योंकि वह उस रसूल[स0] के आदर की महिमा को नकारते हैं जिनके द्वारा उनको यह सब बातें याद हुईं।

इस प्रकार एक दूसरे को कहना कोई ज्ञान चर्चा का आभास नहीं देता अतः इस पर अधिक लिखना समय की बरबादी है।

चौथा अध्याय
वहाबी विचार सारे मुसलमानों के बारे में

वहाबी लोग अपने को छोड़ दुनिया के सब मुसलमानों को काफ़िर (नास्तिक) मुष्रिक समझते हैं। आलूसी ने "तारीखे नज़्द" में एक महत्वपूर्ण वहाबी धर्म गुरू शैख अब्दुल लतीफ बिन अब्दुर्रहमान बिन मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी की एक बड़े लेखांश को लिखा है जिससे पता चलता है कि सारे मुसलमानों पर उनके क्या क्या इल्ज़ाम हैं जिनमें से बहुत सी बातें झूठ हैं और कुछ सच हैं मगर उनको ग़लत कहना ग़लत है। जैसे यह कि ये अल्लाह से मोहब्बत के बजाए दूसरों से प्यार करते हैं जबकि रसूल और आले रसूल[स] या दूसरे औलिया व पहुँचे हुए अल्लाह वालों से जो लोग प्यार करते हैं वह अल्लाह के मुक़ाबले में नहीं बल्कि अल्लाह के लिए ही है या इसलिए कि उन्होंने उसके धर्म के लिए बड़े बड़े काम किए उसके मार्ग में बलिदान दिये। ऐसा प्यार एक धार्मिक कर्तव्य की तरह है। अतः 'ज़विल कुरबा' (आप के परिजन) की मुहब्बत के बारे में कुरआन में आयत है और रिसालत (रसूल होना) का बदला, मान्य देय कह कर मांगा गया है तो जिसने इस मुहब्बत से इन्कार किया उसने हज़रत का हक़ नहीं दिया और एक जगह कहा गया है कि वह जिनके पास ईमान और अच्छे कर्म हैं उनके लिए अल्लाह एक मुहब्बत रख देता है। अर्थात् उस प्रेम को लोगों का धर्म ठहराता है। और हज़रत इब्राहीम की ज़बानी है कि

"पालनहार! मैंने अपनी सन्तान में से कुछ को तेरे घर के पास रखा है। हे पालनहार! इस कारण कि वह नमाज़ पढ़ें तो कुछ लोगों के दिलों को उनकी ओर झुका दे कि वह उनसे प्रेम करें।"

और सुरः–ए–बराअत में हैं कि

"अगर तुम्हारे बाप दादा आदि खुदा और रसूल से अधिक तुम्हें प्रिय हों तो यातना (अज़ाब) के इन्तेजार में रहो।"

यहाँ अल्लाह के साथ प्रेम में रसूल भी सम्मिलित हैं। अनस की रिवायत है कि पैग़म्बर[स] ने कहा किः

"तुममें से कोई मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसे उसके पिता, पुत्र और सब लोगों से अधिक प्रिय न हूँ।"

इसको बुख़ारी और मुस्लिम दोनों ने लिखा है। और सुनन इब्ने माजा में अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब से रिवायत है कि

"हज़रत[स] ने कहा कि अल्लाह की क़सम किसी के दिल में ईमान (आस्था/विश्वास) नहीं आ सकता जब तक मेरे अहलेबैत (घर वालों/सन्तान) से प्रेम न करे, अल्लाह के लिए और मेरी वजह से और हज़रत[स] ने हज़रत अली[अ] के लिए खैबर के दिन कहा कि कल उसे अलम (ध्वजा) दूँगा जिससे अल्लाह और रसूल[स] प्रेम करते हैं और वह अल्लाह और रसूल[स] से प्रेम करता है।"

इसे भी बुख़ारी और मुस्लिम दोनों ने लिखा है। अतः स्वंय हज़रत अली[अ] से कहा

"ऐ अली[अ]! तुम्हारी मुहब्बत ईमान और तुमसे बैर कुफ़्र (नास्तिकता) व निफ़ाक़ (ऊपर से मानना परन्तु अन्दर के मन से नकारना) है।"

और इसी प्रकार की और भी बहुत सी हदीसें हैं। अब जो लोग रसूल[स] से प्रेम आदि को षिर्क के कारणों में साफ़ कहते हैं तो पता चलता है कि उनके दिलों में ज़रा भी रसूल व आले रसूल[स] (रसूल की सन्तान) के लिए प्रेम नहीं है जिसके बाद रसूल[स०] के अनुसार ईमान से वंचित होना खुला हुआ है। मगर जो सच्चे ईमान वाले हैं वह उनसे प्रेम को अल्लाह की ओर से एक कर्तव्य/आदेश समझते हैं।

और इब्ने अब्दुल वहाब की किताब 'तौहीद' के व्याख्याकार का यह कहना है कि यह उनसे अल्लाह से अधिक प्रेम करते हैं और यह उनके मार्ग पर इतना खर्च करते हैं कि जिसका दसवाँ हिस्सा भी अल्लाह के लिए ख़र्च नहीं करते, बिल्कुल गलत है बल्कि यह उनसे प्रेम अल्लाह के प्रेम की वजह से करते हैं। और जो कुछ उनके नाम पर ख़र्च करते हैं वो भी अल्लाह की

प्रसन्नता के लिए करते हैं।

अजीब बात ये है कि यह मुर्दो की कब्रों की ज़ियारत दर्शन और उनकी ओर से दान पुण्य के और तवस्सुल (माध्यम लेना) की वजह से मुसलमानों को काफ़िर कहते हैं और उनके बहुत बड़े इमाम फ़ख़रूद्दीन राज़ी इन चीजों को उन बातों में गिनते हैं जिन पर दुनिया के सारे धर्मों के लोग एक मत हैं। जो मानव प्रकृति की मांग हैं अतः तफ़सीरे कबीर में इस आयत के बारे में कि 'लोग आप[स] से आत्मा के बारे में प्रष्न करते हैं।' आत्मा के अमर होने के बारे में लिखते हैः

"दसवाँ सबूत यह है कि हिन्दू, रोम, अरब, अजम और पूरी दुनिया के धर्मो वाले यहूदी हों या ईसाई मजूसी या मुसलमान सब अपने मुर्दों की ओर से दान पुण्य करते हैं उनके लिए अच्छी दुआ करते हैं और उनकी कब्रों की ज़ियारत को जाते हैं। अगर ये सब ये न समझे होते कि मरने के बाद भी वह किसी न किसी तरह का जीवन रखते हैं तो उनका यह काम व्यर्थ होता। इन सब का एक राय होना इस दान पुण्य पर इस बात का सबूत है कि यह सब प्राकृतिक रूप से बिना किसी भेद भाव के यह मानते हैं कि असल मनुष्य शरीर के अलावा कोई भाग है और वह चीज़ शरीर के मुर्दा होने के बाद भी मुर्दा नहीं होता।"

पैग़म्बर[स०] की हदीस से भी इसका सबूत मिलता है। अतः सहीहे मुस्लिम में हैः

"बड़ा अच्छा काम ये है कि अपनी नमाज़ों के साथ अपने माता पिता की भी नमाज़ें पढ़ो और अपने रोज़ों के साथ अपने माता पिता के रोज़े रखो।"

इस हदीस के बारे में इब्राहीम बिन ईसा तालक़ानी ने अब्दुल्लाह बिन मुबारक से पूछा तो उन्होंने कहा कि इस हदीस की सनद (प्रामाणिकता) में तो कमी है मगर मुर्दो की ओर से दान में कोई मतभेद नहीं है।

इब्ने अरबी की "महाज़रतुल अबरार" में दो जगह पहले भाग और दूसरे भाग में अनस बिन मालिक की रिवायत है

"किसी मुर्दे की ओर से जो दान किया जाता है उसे फ़रिष्ते अल्लाह की नेमत के रूप में उसकी क़ब्र के पास लाते हैं और पुकारते हैं 'यह तेरे लिए उपहार भेजा गया है'।"

वहाबी धारणा कि ये लोग ख़ुदा समझकर प्रेम करते हैं, झुकते हैं और उनसे उम्मीदें बान्धते हैं, इसमें पहला हिस्सा कि वह ख़ुदा समझते हैं बिल्कुल ग़लत है। हाँ प्रेम करते हें जिसके बारे में पहले खुल कर बात हो चुकी है और ये कि वे झुकते हैं सही है मगर उनके अल्लाह से निकट होने की वजह से झुकना है वास्तव में अल्लाह के लिए झुकना है ना कि लोगों और चीज़ों के लिए और उम्मीद अल्लाह से है या उनके द्वारा ना कि वस्तुतः उनसे।

डर और उम्मीद के बारे में इमाम अबूहनीफ़ा नुअ़मान बिन साबित की व्याख्या किताब "अलआ़लिम वल मुतअ़ल्लिम" में है। मुतअल्लिम (छात्र/शिक्षार्थी) का प्रष्न है कि जो किसी से डरे या उम्मीद रखे तो क्या वो काफ़िर है? इसका जवाब जो आलिम (विद्वान/शिक्षक) ने दिया वो ये है

"आस और डर के दो रूप हैं। एक यह कि कोई व्यक्ति किसी से उम्मीद करे या उससे डरे ये समझते हुए कि वो स्वंय अल्लाह को छोड़ कर कोई हानि या लाभ पहुँचा सकता है तो ये व्यक्ति काफ़िर है और दूसरी सूरत ये है कि किसी से उम्मीद रखता हो या डरता हो भलाई की उम्मीद या हानि के डर की वजह से अल्लाह की ओर से कि कहीं अल्लाह के द्वारा मुझ तक भलाई पहुँचाये या उसके हाथों मुझ पर कोई विपत्ति आए या किसी नेमत को ले ले तो ऐसा व्यक्ति काफ़िर नहीं होगा। इसलिए कि पिता भी पुत्र से उम्मीद रखता है कि वह उसे लाभ पहुँचाएगा और कोई व्यक्ति अपनी सवारी के जानवर से उम्मीद रखता है कि वह उसे उसकी मन्ज़िल (गंतव्य स्थान/ठिकाने) तक पहुँचाएगा और राजा से उम्मीद रखे कि वह उसकी उसकी गुहार सुनेगा अपने पड़ोसी से उम्मीद रखता है कि वह लाभ पहुँचाएगा तो

इन बातों से कुफ़्र नहीं हो जाता। इसलिए कि इसके मन में ये है कि असल केवल अल्लाह ही लाभ हानि पहुँचाने वाला है मगर शायद वह इस पुत्र के द्वारा मेरी सहायता करे या इस राजा के द्वारा मेरी गुहार सुने। इसलिए ऐसा व्यक्ति काफ़िर नहीं है। इसी प्रकार कुरआन मजीद में है हज़रत मूसा[अ] की ज़बानी कि मुझे डर है कि कहीं ये लोग मुझे मार न डालें। पता चला कि ऊपरी कारणों को देखते हुए किसी से डरना कोई कुफ़्र का कारण नहीं है।

ये कहना कि ये लोग अल्लाह को छोड़कर दूसरों से दुआ मांगते हैं तो ये पहले बताया जा चुका है कि यह निजी रूप से दूसरों से दुआ नहीं मांगते बल्कि ये होता है कि वो अल्लाह के यहाँ के लिए दुआ मांगे या वो आज्ञा दे तो उसकी दी हुई शक्ति से स्वंय सहायता करें इसके अलावा उनके द्वारा दुआ करते हैं और उनके तवस्सुल (माध्यम) से दुआ मांगते हैं और तवस्सुल के सुबूत हज़रत के कुछ बारे में वहाबियों के विचार के भाग में लिखे जा चुके हैं। कुछ और सबूत यहाँ लिखे जाते हैं :–

सुनन इब्ने माजा में अबू सईद खुदरी से रिवायत है कि "हज़रत[स] ने कहा कि जो अपने घर से नमाज़ के लिए निकले ये कहे अल्लाह! मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ उन व्यक्तियों के हक़ का वास्ता देकर जो तेरे दरबार में प्रार्थना करने वाले हैं और तुझसे प्रार्थना करता हूँ अपना रास्ता तय करने के हक़ से जो तेरी ओर से है इसलिए कि मैं न किसी अपनी मन की चाहत के कारण से निकला हूँ न बुराई बिगाड़ के लिए। न दिखाने और सुनाने के लिए। मैं निकला हूँ केवल तेरी नाराज़ी (रूष्टता) से बचने के लिए और तेरी खुशी की चाह में, तो मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे नरक की अग्नि से बचाए रखना। मेरे पापों को क्षमा करना तेरे सिवा कोई नहीं जो पाप को क्षमा करे।"

इसे हाफ़िज़ जलालुद्दीन सुयूती ने 'जामए कबीर' में भी लिखा है और हाफ़िज़ अबू नईम इस्फ़िहानी ने "अमलुलयौम वल लैला" में अबू सईद खुदरी की रिवायत लिखी है कि

"हज़रत[स] जब नमाज़ के लिए घर से निकलते तो कहते थे कि पालनहार! मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ तुझसे प्रार्थना करने वालों के हक़ का वास्ता देकर और अपने इस उद्देश्य से निकलने (सत्य–धर्म) का वास्ता देकर कि मैं अपनी निजी लालसा वजह से नहीं निकला, न दिखाने और सुनाने के लिए। मैं निकला हूँ तेरी चाह में, तेरे क्रोध से बचने के लिए तो मैं तुझसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे नरक की अग्नि से बचा ले और मुझे स्वर्ग में पहुँचा दे।"

और सुयूती ने भी किताब 'अद्दअ़वात' में अबू सईद खदरी से इसकी रिवायत की है।

और महापुरूषों का चलन भी अल्लाह वालों से तवस्सुल के लिए रहा हैं। अतः इब्ने हज्र असक़लानी ने अपनी किताब "खेयरात हैसान फ़ी मनाक़िब अलईमाम अबी हनीफ़ा नो'मान" के पच्चीसवें अध्याय में लिखते हैं

"इमाम शाफ़ई जब बग़दाद में थे तो इमाम अबू हनीफ़ा की ज़रीह के पास आते थे उन्हें सलाम करते थे और अपनी चाहत पूरा होने के लिए उनसे तवस्सुल करते थे।"

अल्लामा इब्ने हजर मक्की ने इमाम शाफ़ई के षेर लिखे हैं जो उन्होंने अहलेबैते रसूल[स] के बारे में कहे थे जिनका मतलब ये हैः

"आले रसूल[स] के अहलेबैत मेरा माध्यम हैं और अल्लाह के यहाँ मेरा साधन हैं। उन्हीं के द्वारा मुझे उम्मीद है कि कल प्रलय के दिन मेरे दायें हाथ में मेरा कर्मपत्र (नामए आमाल) दिया जाएगा।"

हज़रत[स] के साथ तवस्सुल की बहस में द्वितीय ख़लीफ़ा उमर बिन ख़त्ताब का रसूल[स] के चचा अब्बास को वर्षा के लिए दुआ करने के लिए ले जाना लिखा जा चुका।

यहाँ उसमें कुछ और बढ़ाया जाता है इब्ने असीर जज़ाईरी ने "उसदुलग़ाबा" में लिखा है कि

"उमर बिन ख़त्ताब ने सूखे के समय में

अब्बास के द्वारा वर्षा की प्रार्थना की और अल्लाह ने वर्षा की तो उमर ने कहा अल्लाह की क़सम ये साधन है अल्लाह की ओर और ये स्थान है उनका अल्लाह के यहाँ और हस्सान बिन साबित ने इस आशय के शेर कहे कि: "जब लगातार सूखा पड़ा तो सबने अल्लाह से मांगा तो बादल ने अब्बास के चेहरे की बरकत से वर्षा की। रसूल[स०] के चचा और उनके पिता के भाई और वह जो दूसरे लोगों को छोड़कर आपके वारिस (उत्तराधिकारी) हैं इन्हीं के द्वारा अल्लाह ने उन नगरों को जीवित किया (शहर लहलहाये) वह सूख जाने के बाद हरे–भरे हुए।' और जब बारिष हुई तो लोग अब्बास के हाथों को छूकर अपने मुहँ पर मलने लगे और कहते थे 'मुबारक हो आपको ऐ हरमैन (दो पुण्य स्थानों) के पानी पिलाने वाले' और हाफ़िज़ इब्ने हजर की रिवायत में इब्ने अब्बास की ज़बानी है कि उमर ने दुआ में कहा 'पालनहार! हम तुझसे वर्षा मांगते हैं पैग़म्बर के चचा के द्वारा और उनकी सफ़ेद दाढ़ी को षिफ़ाअत के लिए आगे करते हैं।"

इससे पता चला कि जो अच्छे सदाचारी लोगों और पहुँचे हुए महापुरूषों से तवस्सुल करें इस आयत के घेरे में लाना कि जिन्हें मुष्रिकीन पुकारते हैं ख़ुद अल्लाह के यहाँ किसी वसीले (साधन) की चिन्ता में हैं जिसे इब्ने अब्दुल वहाब ने किताब 'अत्तौहीद' में लिखा है और कहा है इसमें उन मुष्रिकों की काट है जो अच्छे लोगों से और महापुरूषों से प्रार्थना करते हैं और यह बहुत बड़ा षिर्क है जबकि इसके मुकाबले में सुरा माएदा में स्वयं अल्लाह का आदेश है कि 'अल्लाह के यहाँ के लिए साधन प्राप्त करो। इसे छोड़कर के वसीले को षिर्क कहने का नतीजा है कि उमर फ़ारूक़ काफ़िर मुषरिक हों अपने इसी कहने की वजह से जो उन्होंने जनाबे अब्बास (रजि0) के लिए कहा कि ये खुदा की क़सम अल्लाह के यहाँ के लिए वसीला हैं और उसके यहाँ ऊँचा स्थान और आदर है।

वास्तव में मुषरिकों की बुराई वसीला बनाने पर इसलिए हुई है कि वह ऐसी वस्तुओं को वसीला बनाते थे जो वसीला साधन बनाने के पात्र नहीं अर्थात् निर्जीव पत्थरों की मूर्तियाँ जबकि अल्लाह उनसे तवस्सुल की आज्ञा नहीं देता। इसलिए कुछ स्थानों पर है कि यह ऐसों को पुकारते हैं जिनके लिए अल्लाह ने कोई प्रमाण निषानी नहीं उतारी है मगर वह लोग जिन्होंने अपने अच्छे कर्मो और इबादत द्वारा अल्लाह के निकट हो गए उनके आदर सत्कार और उनके वसीले के लिए स्वंय अल्लाह की ओर से निर्देश है तो उनसे वसीला करना षिर्क क्योंकर हो सकता है? अतः मुसलमानों का हर समय में महापुरूषों के साथ तवस्सुल (वसीला बनाना) और उनकी क़ब्रों पर आना और उनसे प्रार्थना को दुआओं के कुबूल होने का ज़रिया समझना बराबर जारी रहा है।

इब्ने हजर की 'इसाबा' में अब्दुर्रहमान बिन रबीअ़ बिन कअ़ब के बारे में है कि इन्हें द्वितीय ख़लीफ़ा उमर ने बाब वल अबवाब पर गर्वनर बनाया था और तुर्को से लड़ाई करने के लिए भेजा और वे वहीं तुर्किस्तान में दफ़्न हुए और वहाँ के लोग आज भी उनकी क़ब्र के द्वारा वर्षा के लिए प्रार्थना करते हैं। और यज़ीद बिन असवद के बारे में सुलैम बिन आमिर का बयान है कि दमिष्क में सूखा पड़ा। मआविया ने यज़ीद बिन असवद के द्वारा वर्षा की प्रार्थना की जिससे वर्षा हुई। शैख़ इब्ने अरबी ने 'महाज़रतुल अबरार' में लिखा है कि अली बिन अमर कातिब ने क़ुरतुबा (**Cordoue Spain**) में बयान किया कि मुझसे अबुल क़ासिम मुहद्दिस (हदीसों के विद्वान) ने यह शेर अबू सईद बिन फ़ाज़िल के सुनाए और उनकी क़ब्र क़ुरतुबा में है उसी प्रकार दुआओं के पूरा होने के लिए मषहूर है जिस प्रकार मा'रूफ़ करख़ी की क़ब्र बग़दाद में और मुफ़्ती मुहम्मद रज़ा साहब अन्सारी ने अपनी किताब 'बानिए दरसे निज़ामी' में जो (निज़ामी पाठयक्रम के संस्थापक) मुल्ला निज़ामुद्दीन फ़िरंगी महली के हाल में लिखी है। लिखते हैं कि मौलाना

इनायतुअल्लाह फिरंगी महली ने लिखा है

"पवित्र क़ब्र इस समय भी सबके लिए लाभदायक है और खासकर ईल्म (विद्या, ज्ञान) के रोगियों के लिए दवा है। मषहूर है कि जिसको किताब का अर्थ समझ में न आता हो किताब खोलकर पवित्र क़ब्र के पास रहे और हज़रत की आत्मिकता का ध्यान करे तो एकदम अर्थ समझ में आ जाएगा। (तज़करा उलमाए फ़िरंगी महल पृ. 171)

षियों में आम तौर पर और कुछ अहले सुन्नत का भी यही तरीक़ा है कि जब गिरने लगते हैं तो ''या अली[अ]'' कहते हैं और सँभल जाते हैं। मैंने जैसा कि 'सफ़र नामए हज' (हज की यात्रा का वृतान्त) में लिखा है।" मैंने मदीन ए मुनव्वरा में यह देखा कि चलने में मुझे ठोकर लगी और गिरने लगा तो एक दुकान से आवाज़ आई 'या रसूल अल्लाह[स]' और मैं सँभल गया।

वास्तव में 'या रसूल अल्लाह[स]' और 'या अली[अ]' कहने में कोई अन्तर नहीं है। मगर वहाबी विचार से दोनों ही षिर्क हैं।

अहले सुन्नत के एक बड़े गिरोह में "या शैख़ अब्दुल क़ादिर" का चलन है। मुफ़्ती मुहम्मद रज़ा अन्सारी ने इसी किताब में लिखा है कि मुल्ला निज़ामुद्दीन ने कुछ लोगों को जो उनके पास दुआ कराने के लिए गये थे कहा कि तुममें से जो व्यक्ति अधिक धार्मिक हो या शैख़ अब्दुल क़ादिर शुयाअल्लाह का जितना भी हो सके विर्द (जाप) करे फिर इस फुटनोट में लिखा है

"इसके पढ़ने या न पढ़ने के बारे में उलमा में मतभेद है। कुछ उलमा इसके पढ़ने को सही नहीं समझते आज से सौ वर्ष पहले इस बारे में एक साहब ने उलमा से फत्वा चाहा उनमें मौलाना रषीद अहमद गंगोही देवबन्दी भी थे। उन्होंने भी इसे पूरी तरह ग़लत नहीं कहा है। उन उलमा के उत्तर किताब की सूरत में प्रकाषित हो चुके हैं। किताब का नाम है "फ़त्वाइ जवाज़े या शैख अब्दुल क़ादिर शुया अल्लाह" मौलाना अषरफ़ अली थानवी ने भी इसकी इजाज़त दी है। उनकी लिखित आज्ञा मैंने मौलाना मुहम्मद 'वासिक़लयक़ीन सज्जादा नषीन कुर्सी ज़िला बाराबन्की और मौलाना मुहम्मद नासिर फिरंगी महली (मुल्ला निज़ामुद्दीन के पोते) के पास स्वंय देखी है।"

यह कहना कि मुसलमान क़ब्रों पर जमकर बैठते हैं तो अगर ये जमकर बैठना कुरआन की तिलावत और तसबीह व दुआ और अच्छे कार्य के लिए है या उन आने वालों की सहायता के लिए बैठें जो यहाँ आते हैं तो इसमें कहाँ बुराई है? बल्कि यह तो अच्छे कार्य हैं।

उन इल्ज़ामों में से जो अच्छे विचारों के मुसलमानों पर लगाए जाते हैं एक बड़ी कठोरता के साथ ये भी है वह इन चौखटों को चूमते हैं मगर इसके कुफ़्र या षिर्क होने पर कोई सबूत नहीं है जबकि अल्लाह के चिन्हों के आदर के लिए कुरान में आदेश है और चूमना भी एक आदर का तरीक़ा है जिसकी आज्ञा हज़रे असवद के लिए मौजूद है और इसके अलावा किसी को चूमने की मनाही नहीं है, तो यह आदर में सम्मिलित होगा और पहले आ चुका है। उम्मुल मोमेनीन आयषा का बयान है कि हज़रत[स] ने उस्मान बिन मज़ऊन की लाष को चूमा और मैंने देखा कि हज़रत[स] के आँसू गालों पर थे इसको सुलेमान बलख़ी क़न्दूज़ी ने 'यनाबीउल मुअद्दा' में लिखा है और इब्ने अब्बास और आयषा दोनों की रिवायत है कि प्रथम ख़लीफ़ा अबूबक्र ने हज़रत[स] की मृत्यु के बाद आपके शरीर को चूम लिया इसे इब्ने माजा ने अपनी सुनन में लिखा है। और कब्र को चूमने के लिए हज़रत[स] की हदीस है। किफ़ायाएषैबी और फ़तवाइग़राइब और मतालिबुल मोमेनीन और ख़ज़ानतुर्रांविया में है कि अपने माता पिता की क़ब्रों के चूमने में कोई ख़राबी नहीं है। इसलिए कि एक व्यक्ति हज़रत[स] के पास आया और कहा कि या रसूल अल्लाह[स] मैंने क़सम खाई है कि मैं स्वर्ग की चौखट और हूरों के माथे को चूमूँगा। अब मैं क्या करूँ? हज़रत[स] ने कहा माँ के पाँव और पिता के माथे को चूम ले। उसने कहा कि या रसूल अल्लाह अगर

मेरे माता पिता जीवित न हों तो? कहा कि क़ब्र को चूम ले। उसने कहा कि कब्र का पता न हो तो? कहा कि दो रेखाएँ खींचे एक माँ की क़ब्र के विचार से और दूसरी पिता के विचार से और उन दोनों को चूम लो। तुम्हारी क़सम पूरी हो जाएगी।

"तमस्सुह" का अर्थ है हाथ से छूकर अपने मुहँ पर मलना। इसे वहाबी लोग रूक्ने यमानी के लिए जायज़ और अच्छा समझते हैं। इसी प्रकार दूसरे स्थानों को भी जो कि आदर के आम हुक्म पहले के महापुरूषों के और शरीयत (धर्म कानून) से मना होने के सूबूत न होने के आधार पर उसे जायज़ और अच्छा समझना चाहिए। और पहले इस किताब में आ चुका है कि जब उमर ने अब्बास का वास्ता देकर वर्षा के लिए प्रार्थना की और वर्षा हुई तो लोगों ने अब्बास के साथ तमस्सुह किया और कह रहे थे कि मुबारक हो आपको दो हरमैन के पानी पिलाने वाले।

और क़ाज़ी अय्याज़ की 'शिफ़ा' में है कि अब्दुल्लाह बिन उमर को देखा गया कि उन्होंने हाथ रख मिंबर के उस स्थान पर जहाँ हज़रत[स] बैठते थे और फिर उस हाथ को अपने माथे से लगाया तो अगर छूकर अपने लगाना कुफ्र हो तो फिर उन सब सहाबियों व ताबईयों को काफ़िर समझना पड़ेगा। यह कहना कि यह लोग अपने को उन औलिया व मुक़र्रबीन (अल्लाह के क़रीबी) का मोहताज (जरूरत वाला) समझते हैं तो वास्तव में अल्लाह के बन्दे के लिए अनिवार्य है कि वह अपने को मोहताज समझे और जो अपने को ज़रूरत वाला न समझे वह काफ़िर है क्योंकि सुरः–ए–अहज़ाब में है किः

"ऐ इन्सानो तुम अल्लाह के दरबार में मोहताज (ज़रूरत वाला) हो और अल्लाह एक मात्र है जो मोहताज नहीं है और प्रषंसा के लायक़ है।"

और सुरः–ए–मुहम्मद में है

"अल्लाह समृद्ध है और तुम सब ज़रूरत वाले हो।"

और औलिया व नेक लोगों की ज़रूरत इसलिए है कि वह अल्लाह के दरबार में हमारे लिए प्रार्थना करें और मोमिन को दूसरे मोमिन की प्रार्थना की ज़रूरत है तो फिर औलिया व मुक़र्रबीन और नबियों व रसूलों व पाक इमामों की तो और ज़्यादा जरूरत है।

ये कहना कि उनके द्वारा वर्षा मांगते हैं तो इसके बारे में पहले आ चुका है कि मदीने में सूखा पड़ा और जनाबे आयषा से षिकायत की तो उन्होंने तरकीब बताई कि हज़रत[स] की क़ब्र का एक हिस्सा आसमान के नीचे कर दो। अतः वर्षा हुई। और हज़रत उमर ने हज़रत अब्बास रसूल[स] के चचा के द्वारा वर्षा की प्रार्थना की।

यह कि भयानक वनों में इन्हें सहायता के लिए पुकारते हैं इसके लिए स्वंय हज़रत[स] का निर्देश है जिसे तबरानी ने लिखा है कि हज़रत ने कहा जब तुम में से किसी की कोई चीज़ खो जाए या किसी ऐसे स्थान पर हो जहाँ कोई सहायता करने वाला न हो तो कहो "ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो।" एक रिवायत में है कि "मेरी फरयाद गुहार को पहुँचो" इसलिए कि अल्लाह के कुछ बन्दे ऐसे भी हैं जिन्हें तुम देख नहीं पाते।

ये कहना कि यह लोग लड़कियों के विवाह आदि के लिए इनसे विनती (इल्तजा) करते हैं, बड़े–बड़े कार्यो में भी इन पर भरोसा करते हैं तो बे शक ये सब इस हद तक ठीक है ये उनसे अपने कार्यो के लिए दुआ की चाहत रखते हैं और इस अर्थ में उनसे सहायता चाहते है। यह कहना कि ये उनसे पापों के लिए क्षमा चाहते हैं" एक बड़ा झूठ है। कोई भी मोमिन गुनाहों की क्षमा की विनती इनसे नहीं करता बल्कि इनकी शफाअत की उम्मीद रखता है। बेशक वे आस्था रखते हैं कि पाक इमामों और खुदा के क़रीबी लागों से लगाव उनकी ओर खुदा की रहमत दया को खींचेगा जैसा कि अहलेबैत के बारे में रसूल[स0] की हदीस है किः

"मेरे अहलेबैत की मिसाल नूह की नाव की तरह है जो इस पर सवार हुआ उसने नजात (मुक्ति) पा ली।"

और क्षमायाचना के लिए जैसा कि हम लिख चुके

हैं खुदा ने कुरआन में हुक्म दिया है कि लोग रसूल[स0] के पास हाज़िर हो और वहाँ आकर क्षमायाचना करें और फिर रसूल भी उनके लिए क्षमायाचना करें। सूरए यूसुफ़ में है कि याकूब के बेटों ने उनसे कहा कि हमारे लिए क्षमायाचना कीजिए तो उन्होंने वादा किया कि वह ऐसा ही करेंगे। हज़रत इब्राहीम ने अपने मुँह बोले बाप के लिए क्षमायाचना की और कुरान में सुरः–ए–नूह में जनाबे नूह की दुआ है कि जो मेरे घर आए उसकी क्षमा कर।

यह कहना कि जब मुसलमान इन औलिया से दुआ माँगते हैं तो खुदा का ध्यान बिल्कुल नहीं होता, यह मोमिनों के प्रति बुरा विचार बल्कि झूठा आरोप है इनको उन लोगों के दिल का हाल कैसे मालूम है? ज़रा भी सूझ बूझ रखने वाला हर मोमिन यह जानता है कि मूल याचन केन्द्र (मूल केन्द्र जिससे मांगा जाय) वास्तव में केवल अल्लाह है और ये औलिया व सालेहीन उसी की इबादत करके इस स्थान पर पहुँचे हैं। इसके अलावा और इसके विपरीत उनके दिल में कोई दूसरा ध्यान नहीं होता, आम सूफ़ीसंत के बारे में निजी तौर से जानकारी नहीं है, न हम उनकी वकालत में भी अपने पीरों और मुर्षिदों (गुरूओं) के लिए यह विचार नहीं रखते कि वे अल्लाह से बेपरवाह होकर स्वयं किसी को लाभ या नुक़सान पहुँचा सकते हैं। एक नज़्दी आलिम ने जो यह कहा कि सूफ़ीयों का कहना है कि अल्लाह ने हर वली के साथ एक फ़रिष्ता मुक़र्रर किया जो लोगों की ज़रूरत को पूरा करे तो इसे एक बेबुनियाद बात तो समझा जा सकता है मगर इसमें कुफ़्र या षिर्क की कोई बात नहीं है इसलिए कि अल्लाह ने बृहमाण्ड में बहुत से कामों के लिए फ़रिष्ते नियुक्त किए हैं।

जैसे जिब्रील 'वहि' के अमानत दार (ट्रस्टी) है, इस्राफ़ील के ज़िम्मे सूर फूकना है, मालिक जहन्नम (नरक) के प्रभारी हैं, रिज़्वान जन्नत (स्वर्ग) के प्रभारी हैं इज़राईल यमराज (मलकुल मौत) है आदि तो अगर मानो खुदा लागों की ज़रूरत पूरी करने के लिए कोई फ़रिश्ता मुकर्रर करे तो इसमें क्या खराबी है? और यह कुरआन की उन आयतों के बिल्कुल विरोध नहीं है जिनमें यह है कि खुदा ज़रूरत पूरी करता हैं जैसे पहले आ चुका है कि मौत देना खुदा का काम है परन्तु कुरआन में ही एक जगह पर इसका सम्बन्ध मलकुल मौत (यमराज) से और कई स्थान पर फ़रिश्तों से कहा गया।

वहाबियों को सबसे अधिक पीड़ा पाक अहलेबैत के रौज़ों के महत्व और आकर्षकता को देखकर होती है। इसमें उस का हाथ है जो एक गिरोह को रसूल के अहलेबैत से बैर हो गया था। ये लोग अहलेबैत के मानने वालों पर इल्ज़ामों, आरोपों और झूट लगाने की हद कर देते हैं, जबकि यदि कोई साफ़ दिल और बेलाग मन के साथ इन रौज़ों, पर आए तो यहाँ की हर बात से तौहीद और अल्लाह की शान टपकती है। उसे खुदा के प्रति ध्यान, ज्ञान, भक्ति भाव, निष्ठा, उपासना इबादत (भक्ति) के वे दृश्य दिखेंगे जिनका जवाब कहीं और न मिलेगा और सलाम और ज़ियारतों को सुने तो उनके हर शब्द से एकेश्वरवाद (तौहीद) और उसकी महान्ता का इक़रार (मानना) उजागर होता है। जैसे हज़रत अली के रोज़े पर जो इज़्ने दुखूल (अन्दर आने की आज्ञा) की दुआ पढ़ी जाती है, उसमें हैः "कोई खुदा नहीं सिवा अल्लाह के, वह अकेला है, उसका कोई शरीक (साझी) नहीं, और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद[स0] उसके बन्दे (दास) और रसूल (दूत) हैं जो उसकी ओर से हक़ (सत्य) को लेकर आए और उसके पैग़म्बरों की तस्दीक़ (सत्यापन) की।

ऐसे ही शब्द सभी ज़ियारतों और दुआओं में हैं जो इन पाक स्थानों पर पढ़े जाते हैं।